बिगुल पुस्तिका – 12

मज़दूर नायक क्रान्तिकारी योद्धा

बिगुल सम्पादक मण्डल

राहुल फ़ाउण्डेशन
लखनऊ

ISBN 978-81-906253-5-7

मूल्य : रु. 10.00

यह संस्करण : जनवरी, 2008

प्रकाशक : **राहुल फ़ाउण्डेशन**
69, बाबा का पुरवा, पेपरमिल रोड, निशातगंज,
लखनऊ–226 006 द्वारा प्रकाशित

आवरण : **रामबाबू**

टाइपसेटिंग : कम्प्यूटर प्रभाग, राहुल फ़ाउण्डेशन

मुद्रक : क्रिएटिव प्रिण्टर्स, 628/एस–28, शक्तिनगर, लखनऊ

Mazdoor Nayak, Krantikari Yoddha *ed.* Bigul Editorial

इस पुस्तिका के बारे में

दुनिया के मज़दूर वर्ग के बीच से बहुत से ऐसे क्रान्तिकारी नायक उभरे हैं जो सर्वहारा क्रान्ति के मार्गदर्शक सिद्धान्त को पकड़कर अपने वर्ग की मुक्ति की राह पर तेज़ी से आगे बढ़े और फिर अपनी अडिग निष्ठा, बहादुरी, व्यावहारिक जीवन की ज़मीनी समझ और रचनात्मकता के चलते हमारे युग के नये नायक बन गये। पूँजीपति वर्ग जनता के ऐसे योद्धाओं को कभी नायक नहीं मान सकता लेकिन वे मेहनतकश जनता के दिलों में रहते हैं और उनकी जीवनगाथा आने वाली पीढ़ियों को भी लड़ने की प्रेरणा देती रहती है।

इस पुस्तिका में ऐसे ही तीन मज़दूर क्रान्तिकारियों का परिचय दिया गया है। जर्मनी, इंलैण्ड और रूस के ये मज़दूर नायक इतिहास में प्रसिद्ध तो नहीं हुए लेकिन उनकी ज़िन्दगी से यह शिक्षा मिलती है कि जब मेहनत करने वाले लोग ज्ञान हासिल करते हैं और अपनी मुक्ति का माग ढूँढ़ लेते हैं तो फिर वे किस तरह अडिग-अविचल रहकर क्रान्ति में हिस्सा लेते हैं। उनके भीतर ढुलमुलपन, कायरता, कैरियरवाद, उदारतावाद, और आधू-अधूरे ज्ञान पर इतराने जैसे दुर्गुण नहीं होते जो मध्यवर्गीय बुद्धिजीवियों में पाये जाते हैं।

इनके साथ ही हम अमेरिका की एक जुझारू महिला मज़दूर संगठनकर्ता मैरी जोंस का परिचय और उनकी लिखी एक रपट भी दे रहे हैं, जिन्हें मज़दूर प्यार से 'मदर जोंस' कहकर पुकारते थे।

– राहुल फ़ाउण्डेशन

25.1.2008

जर्मनी के क्रान्तिकारी मज़दूर
जोहान फिलिप्प बेकर
जो मार्क्स और एंगेल्स के दोस्त भी थे

एक संक्षिप्त परिचय

जोहान फिलिप्प बेकर एक जर्मन मज़दूर थे जिन्होंने तीसरे दशक में युवावस्था की दहलीज़ पर क़दम रखने के साथ ही मज़दूरों के बीच उभर रही आन्दोलनात्मक सरगर्मियों में भाग लेना शुरू कर दिया था। उनकी राजनीतिक चेतना लगातार आगे विकसित होती रही। 1848-1849 में जब पूरे यूरोप में क्रान्तियों का दावानल भड़क उठा तो बेकर ने उसमें बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया। जर्मनी में क्रान्तिकारी उभार के उतार के बाद वे स्विट्ज़रलैण्ड जाकर बस गये।

यहाँ हम **जोहान फिलिप्प बेकर** (1809-1886) के बारे में विश्व सर्वहारा के महान नेता और शिक्षक **फ़्रेडरिक एंगेल्स** द्वारा लिखी गयी उस टिप्पणी का एक अंश दे रहे हैं जो उन्होंने बेकर की मृत्यु के बाद उन्हें याद करते हुए लिखी थी। इसके साथ ही हम **अगस्त बेबेल** के नाम एंगेल्स का एक पत्र भी दे रहे हैं जिसमें उन्होंने बेकर के दुर्लभ क्रान्तिकारी गुणों की चर्चा की है। अगस्त बेबेल 19वीं सदी के यूरोपीय मज़दूर आन्दोलन की एक हस्ती थे जो जर्मन सामाजिक जनवादी पार्टी व दूसरे इण्टरनेशनल के संस्थापकों में से एक थे तथा मार्क्स-एंगेल्स के मित्र थे।

बेकर जर्मनी के मज़दूरों की उस पहली पीढ़ी के सदस्य थे जिसने कम्युनिज़्म के सिद्धान्तों को स्वीकार किया था और सर्वहारा वर्ग की राजनीतिक पार्टी के निर्माण में बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया था।

उन्होंने **पहले इण्टरनेशनल** (इण्टरनेशनल वर्किंगमेंस एसोसिएशन, 1864 में गठित) की स्थापना में हिस्सा लिया और स्विट्ज़रलैण्ड में रहते हुए उसकी जेनेवा शाखा को संगठित करने का काम भी किया। स्विट्ज़रलैण्ड में रहते हुए बेकर ने इण्टरनेशनल की जर्मन शाखाओं के अख़बार '**अग्रदूत**' का सम्पादन किया। 1871 में मार्क्स-एंगेल्स के साथ मिलकर दक्षिणी फ़्रांस में विद्रोह पैदा करने की जी-तोड़ कोशिश की थी ताकि पहले मज़दूर राज्य पेरिस कम्यून को बचाया जा सके। 21 जुलाई, 1871 के एक पत्र में बेकर ने लिखा है : "इसके लिए हमने मनुष्य के शक्ति योग्य सबकुछ न्योछावर किया, जोखिम मोल लिया... यदि हमारे पास मार्च तथा अप्रैल में अधिक धन होता, तो हम पूरी दक्षिणी फ़्रांस को उठ खड़ा करते और पेरिस कम्यून को बचाते।" यूरोपीय मज़दूर आन्दोलन में वैज्ञानिक समाजवाद के विचारों का विरोध करने वालों के ख़िलाफ़ बेकर हमेशा अडिग-अविचल रूप से सक्रिय रहे। उनकी दोस्ती **मार्क्स, एंगेल्स, बेबेल** आदि से आजीवन बनी रही। बुढ़ापे से अप्रभावित ज़िन्दादिल, बहादुर, जीवन्त मज़दूर योद्धा बेकर आख़िरी साँस तक एक सच्चे भौतिकवादी और क्रान्तिकारी मज़दूर की ज़िन्दगी जिये। 1886 में 77 वर्ष की उम्र में उनकी मृत्यु हुई।

मज़दूरों के महान शिक्षक फ्रेडरिक एंगेल्स की कलम से जोहान फिलिप्प बेकर का परिचय

बेकर दुलर्भ चरित्र के इन्सान थे। केवल एक शब्द से ही उनका पूरा चरित्र उजागर हो जाता है : यह शब्द है **स्वस्थ।** शरीर और दिमाग़ दोनों ही दृष्टि से वह पूरे तौर से स्वस्थ थे। बलशाली देह और ज़बरदस्त शारीरिक शक्ति वाले वह एक ख़ूबसूरत आदमी थे; अपनी ख़ुशमिजाज़ी तथा स्वस्थ गतिविधियों से उन्होंने अपने मस्तिष्क को भी, जोकि शिक्षित न होते हुए भी असंस्कृत कदापि नहीं था, समन्वित रूप से अपने शरीर के समान

ही विकसित कर लिया था। वह उन चन्द लोगों में से थे जिनके लिए सही मार्ग पर चलने के लिए इतना ही पर्याप्त होता है कि वह अपनी सहज प्रवृत्तियों का अनुसरण करते जायें। यही कारण था कि क्रान्तिकारी आन्दोलन के विकास के हर क़दम के साथ क़दम मिलाकर चलते जाना तथा उसके आगे की पाँतों में अठहत्तरवें वर्ष में भी उसी उत्साह और लगन के साथ खड़ा होना उनके लिए आसान था – जिससे अपनी उम्र के अठारहवें वर्ष में वह खड़े होते थे। जो बालक 1814 में अपने देश के अन्दर से गुजरने वाले कज़्ज़ाकों के साथ खेला था और 1820 में जिसने कोत्सेबू के हत्यारे जान्द को मौत के घाट उतारा जाता देखा था, वह तीसरे दशक के डाँवाँडोल विपक्षी की स्थिति से विकसित होकर और भी आगे बढ़ गया था तथा 1886 में भी आन्दोलन के उच्चतम स्थान पर मौजूद था। 1848 के 'संजीदा' प्रजातन्त्रवादियों में से अधिकांश लोगों की तरह वह कोई निरानन्द, उच्च सिद्धान्त वाले ज्ञानशून्य आदमी भी नहीं थे; बल्कि प्रफुल्लित पफाल्ज़ के सच्चे पुत्र थे, जीवन के प्रति ज़बदस्त लगाव रखने वाले। वह ऐसे आदमी थे जो अन्य सभी लोगों की तरह मदिरा, स्त्रियों तथा गीत-संगीत से प्रेम करते थे। वह **निबेलुंग के सम्बन्ध में गीत** के देश में 'वर्म्स' के समीप बड़े हुए थे। अपने जीवन के बाद वर्षों में भी वह प्राचीन महाकाव्यों के किसी पात्र की ही तरह लगते थे। तलवारों के प्रहारों के बीच शत्रु को खुशी-खुशी और व्यंग्यपूर्वक ललकारते हुए तथा, जब प्रहार करने के लिए कोई न होता, तो लोकगीतों की रचना करते हुए वह, वायलिनवादक फोल्कर के इसी रूप में और केवल इसी रूप में दिखलायी पड़ते रहे होंगे।

जोहान फिलिप्प बेकर के नाम मार्क्स का पत्र

'लीबनिज' तथा 'सब तुच्छ' से सम्बन्धित आपको दोनों लघु कविताएँ मुझे बेहद पसन्द आयीं; अच्छा होगा यदि आप (मेरे सुझाव से सहमत हों तो) इन दोनों को एक चिट्ठी में रखकर फ़ौरन वेडेमेयर के पास भेज दें।

9 अप्रैल, 1860

अगस्त बेबेल के नाम एंगेल्स का पत्र

बुढ़ापे में भी प्रफुल्लचित्त, संघर्ष के लिए तैयार

प्रिय बेबेल,

यह पत्र तुम्हें मैं उस बातचीत के सम्बन्ध में लिख रहा हूँ जो चिरप्रिय जोहान फिलिप्प बेकर से मेरी हुई है। वह दस दिन तक यहाँ मेरे साथ रुके थे और अब पेरिस होकर (जहाँ अचानक उनकी बेटी की मृत्यु हो गयी थी) वह जेनेवा वापस पहुँच गये होंगे। उस वृद्ध महाबली को एक बार फिर देखकर मेरा मन ख़ुशी से भर गया था। शारीरिक रूप से यद्यपि वह ढल गये हैं, किन्तु अब भी वह बहुत हँसमुख हैं और उनके अन्दर संघर्ष की भावना भरी हुई है। वह हमारी राइनी, फ्रॉकिश गाथा में से ही निकले हुए एक महापुरुष हैं जो **निबेलुंग के गीत** में मूर्तमान हो गये हैं – वह साक्षात वायलिनवादक फोल्कर हैं।

वर्षों पहले मैंने उनसे आग्रह किया था कि वह अपने संस्मरण और अनुभवों को लिख डालें। अब उन्होंने मुझे बतलाया कि तुमने तथा दूसरों ने भी इसके लिए उन्हें उत्साहित किया था, कि वह स्वयं भी उन्हें लिखने के बहुत इच्छुक हैं और कई बार तो उन्होंने लिखना शुरू भी किया था, किन्तु केवल छिटपुट ही प्रकाशन होने की वजह से उनके अन्दर वास्तविक उत्साह नहीं पैदा हो सका (उदाहरण के लिए, **न्यू बेल्ट (222)** के पास छपने के लिए उन्होंने कई वर्ष पहले कई बहुत बढ़िया चीज़ें भेजी थीं, किन्तु, जैसाकि लीबनेख़्त ने मोत्तेलर के माध्यम से उन्हें सूचित किया था, वे चीज़ें पर्याप्त रूप से 'उपन्यासात्मक' नहीं पायी गयी थीं!)

8 अक्टूबर, 1886

रॉबर्ट शा : विश्व सर्वहारा क्रान्ति के इतिहास के मील के पत्थरों में से एक

पिछले क़रीब डेढ़ सौ वर्षों के विश्व सर्वहारा क्रान्ति के इतिहास में, बहुतेरे देशों में **रॉबर्ट शा** जैसे हज़ारों ऐसे मज़दूर संगठनकर्ता और नेता हुए हैं, जिनसे आम जनता तो दूर, इतिहास के विद्यार्थी भी परिचित नहीं हैं। ऐसे लोगों के बारे में यहाँ-वहाँ से, बड़ी मुश्किल से छिटपुट जानकारी मिलती है, पर उसी से यह स्पष्ट हो जाता है कि ऐसे सर्वहारा चरित्रों के बिना हम सर्वहारा क्रान्तियों की यात्रा की कल्पना भी नहीं कर सकते।

रॉबर्ट शा पेशे से घरों की रँगाई-पुताई करने वाला एक ग़रीब अंग्रेज़ मज़दूर (रंगसाज़) थे, जो **पहले इण्टरनेशनल** के संस्थापक सदस्यों में से एक थे।

इण्टरनेशनल वर्किंगमेंस एसोशिएशन (पहला इण्टरनेशनल) की स्थापना 28 सितम्बर, 1854 को लन्दन के सेण्ट मार्टिन हॉल में यूरोप के विभिन्न देशों के मज़दूरों की एक सभा में हुई। सर्वहारा अन्तरराष्ट्रीयता- वाद के उसूलों को साकार करने वाला यह पहला संगठन था। "मार्क्स इस संगठन के हृदय और आत्मा थे। उसके पहले सम्बोधन तथा दर्जनों दूसरे प्रस्तावों, ऐलानों और घोषणापत्रों के भी लेखक वही थे। विभिन्न देशों के मज़दूर आन्दोलनों को एकताबद्ध करके, मार्क्सवाद से पहले के ग़ैरसर्वहारा वर्गीय समाजवाद के विभिन्न रूपों (मेजिनी, प्रूधों, बाकुनिन, ब्रिटिश उदारवादी ट्रेड यूनियन आन्दोलन, जर्मन लासालवादियों आदि को) संयुक्त कार्रवाइयों में लाने की दिशा में कोशिश करके, तथा इन सभी मतों और सम्प्रदायों के सिद्धान्तों से संघर्ष

करके, मार्क्स ने विभिन्न देशों के मज़दूर वर्ग के सर्वहारा संघर्ष के लिए एक ही जैसी कार्यनीति निर्धारित की।" (लेनिन)

पेरिस कम्यून (1871) की पराजय तथा अराजकतावादी बाकुनिन के चेलों द्वारा पैदा की गयी फूट के बाद, हेग कांग्रेस (1872) के पश्चात मार्क्स ने इण्टरनेशनल की आम परिषद को न्यूयार्क भिजवा दिया। क्रमशः निष्प्रभावी होता इण्टरनेशनल 1876 में विघटित कर दिया गया, क्योंकि इतिहास के रंगमंच पर अब उसने अपनी ऐतिहासिक भूमिका निभा ली थी। उसने दुनियाभर में मज़दूर आन्दोलन के और अधिक विकास के लिए, एक ऐसे काल के लिए रास्ता तैयार कर दिया था, जिसमें आन्दोलन का दायरा विस्तारित हुआ और अलग-अलग देशों में समाजवादी जनपार्टियों की स्थापना हुई तथा **दूसरा इण्टरनेशनल** अस्तित्व में आया। लेनिनकालीन बोल्शेविक ढाँचे की क्रान्तिकारी सर्वहारा पार्टियों ने और फिर **अक्टूबर क्रान्ति** के बाद स्थापित **तीसरे इण्टरनेशनल** ने इसी विकासयात्रा को आगे बढ़ाया।

रॉबर्ट शा पहले इण्टरनेशनल की आम परिषद के सबसे सक्रिय सदस्यों में से एक थे। उस समय तक ब्रिटेन के मज़दूर आन्दोलन में उदारपन्थी ट्रेड यूनियन नेता और उनका ट्रेड यूनियनवाद मुख्यतः प्रभावी हो चुके थे जो बड़े पैमाने के पूँजीवादी उत्पादन के प्रगतिशील स्वरूप को स्वीकारते हुए पूँजीवाद के पैरोकार कूपमण्डूक अर्थशास्त्रियों के पैरोकार बन चुके थे। उनका मानना था कि पूँजीवाद की बुनियाद बहुत ठोस है और मज़दूर आन्दोलन का काम सिर्फ़ इतना ही है कि वे मज़दूरों के लिए कुछ बेहतर वेतन, बेहतर सुविधाएँ और सुधार हासिल कर लें।

पहले इण्टरनेशनल में मार्क्स के अनुयायियों के साथ ही निम्न पूँजीवादी समाजवाद और अराजकतावाद की जो भी धाराएँ शामिल थीं, वे पूँजीवादी शोषण के ख़िलाफ़ मेहनतकश जनता के विरोध को प्रकट करतीं थीं, पर साथ ही पूँजीवादी उत्पादन के रुझान के ख़िलाफ़ छोटे उत्पादकों के विरोध को भी प्रतिबिम्बित करती थीं, जो एक प्रतिगामी रुझान था। लेकिन ये सभी धाराएँ मेहनतकशों की अन्तरराष्ट्रीय एकता की पक्षधर थीं जबकि उदारपन्थी सुधारवादी ब्रिटिश ट्रेडयूनियनवादी

लोग संकीर्ण स्थानीयतावादी थे।

रॉबर्ट शा उन राजनीतिक चेतनासम्पन्न मज़दूरों में से एक थे जिन्होंने पहले इण्टरनेशनल के निर्माण के पहले ही ब्रिटिश सुधारवादी ट्रेड यूनियनवादी नेताओं के प्रभाव एवं वर्चस्व के विरुद्ध संघर्ष शुरू कर दिया था। रॉबर्ट शा उन थोड़े से ब्रिटिश मज़दूर नेताओं में शामिल थे जो चार्टिस्ट या समाजवादी विचार रखते थे और महज़ अपने-अपने कारखानों में वेतन और सुधार की माँग के लिए लड़ने के बजाय मज़दूरों की अन्तरराष्ट्रीय एकजुटता और व्यापक वर्गीय हितों के लिए साझा संघर्ष की वकालत करते थे। इन नेताओं ने जर्मन और फ़्रांसीसी मज़दूरों और पोलिश आप्रवासियों के साथ सम्पर्क स्थापित किये। यह पहले इण्टरनेशनल की स्थापना की दिशा में एक महत्वपूर्ण क़दम था।

पहले इण्टरनेशनल की आम परिषद में **जॉर्ज ऑडगर, क्रेमर** और **जॉन हेल्स** के साथ ही इंग्लैण्ड से रॉबर्ट शा को चुना गया। साथ ही उन्हें उत्तर अमेरिका के लिए संवादी सचिव की भी ज़िम्मेदारी सौंपी गयी। मार्क्स ने इस बात को स्वीकार किया था कि **"मुख्यतः रॉबर्ट शा के निरन्तर प्रयासों का ही नतीजा था कि इंग्लैण्ड के बहुतेरे ट्रेड यूनियन संगठन हमारे साथ लामबन्द हो सके।"**

कम्युनिस्ट लीग के पुराने सदस्य **लेसनर, लोशनर, फैन्द्रा और कॉब,** फ़्रांस के प्रभारी और वाद्ययन्त्र बनाने वाले कारीगर यूजीन द्यूर्या तथा स्विट्ज़रलैण्ड के प्रभारी, घड़ीसाज़ **हरमन जंग** के साथ मिलकर रॉबर्ट शा ने इण्टरनेशनल की आम परिषद में मार्क्स की काफ़ी सहायता की। अक्सर लन्दन स्थित मार्क्स के आवास पर होने वाली बैठकों में रॉबर्ट शा नियमित रूप से भाग लेते थे।

इण्टरनेशनल को खड़ा करने और ब्रिटिश ट्रेड यूनियनवादी नेताओं के विरुद्ध संघर्ष में रॉबर्ट शा ने अपनी ज़िन्दगी क़ुर्बान कर दी। अनथक श्रम से उनकी सेहत बरबाद होती चली गयी पर वह इसकी बिना परवाह किये अपने काम में जुटे रहे।

31 दिसम्बर 1869 को अन्ततः फेफड़े की टीबी की बीमारी के चलते ही उनकी मृत्यु हुई, जो पिछले कुछ वर्षों से दीमक की तरह

उनके शरीर को चाटती जा रही थी। रॉबर्ट शा मरते समय रोग के साथ ही, सपरिवार भूख और बेरोजगारी से भी जूझ रहे थे। इण्टरनेशनल की 1868 की ब्रुसेल्स कांग्रेस से लौटने के बाद, उनको नौकरी से निकाल दिया गया। उनकी मृत्यु के बाद उनकी पत्नी और बेटी को घोर ग़रीबी में दिन बिताने पड़े। पर जिन हज़ारों ब्रिटिश मज़दूरों के बीच उन्होंने राजनीतिक काम किया था, वे उन्हें कभी नहीं भूल सके। वे उनके साहस, धैर्य, विनम्रता और ज़िन्दादिली की बात करते नहीं अघाते थे।

रॉबर्ट शा की मृत्यु की सूचना इण्टरनेशनल की सभी शाखाओं तक भेजने की ज़िम्मेदारी इण्टरनेशनल की आम परिषद ने कार्ल मार्क्स को सौंपी। कार्ल मार्क्स ने इण्टरनेशनल की बेल्जियम शाखा के नेता **दे पाएपे** को पत्र भेजते हुए एक निधन-सूचना भी लिखकर भेजी जो **ल' इण्टरनेशनाल** (इण्टरनेशनल की बेल्जियम शाखा का मुखपत्र) के 16 जनवरी के अंक (अंक–53) में एक सम्पादकीय टिप्पणी के साथ प्रकाशित हुई।

रॉबर्ट शा (निधन सूचना)
कार्ल मार्क्स

इण्टरनेशनल के संस्थापकों में से एक, लन्दन आम परिषद के सदस्य, उत्तर अमेरिका के लिए संवादी सचिव नागरिक रॉबर्ट शा का इस सप्ताह फुफ्फुस यक्ष्मा (पल्मोनरी ट्यूबरक्लोसिस) रोग से देहान्त हो गया।

वे परिषद के सर्वाधिक सक्रिय सदस्यों में से एक थे। वे एक शुद्ध हृदय, लौह चरित्र, भावप्रवण स्वभाव और सच्ची क्रान्तिकारी प्रतिभा से सम्पन्न व्यक्ति थे जो किसी भी तरह की क्षुद्र महत्त्वाकांक्षा और व्यक्तिगत स्वार्थ से काफी ऊपर थे। वे स्वयं एक ग़रीब मज़दूर थे, पर हमेशा ही वे किसी मज़दूर को अपने से अधिक ग़रीब समझकर उसकी सहायता के लिए तत्पर रहते थे। व्यक्तिगत मामलों में वे एक बच्चे की तरह विनम्र थे, लेकिन अपने सार्वजनिक जीवन में हर तरह के समझौते

को वे रोषपूर्वक खारिज करते रहे। यह मुख्यत: उन्हीं की लगातार कोशिशों का नतीजा था कि (ब्रिटिश) ट्रेड यूनियनें हमारे साथ लामबन्द हो सकीं। लेकिन इसी काम ने बहुतों को उनका प्रचण्ड शत्रु भी बना दिया। ब्रिटिश ट्रेड यूनियनें, सबकी सब स्थानीय मूल की रही हैं और मूलत: सबकी स्थापना सिर्फ़ वेतन आदि माँगों के ही ख़ास उद्देश्य से हुई थी। इस नाते, मध्ययुगीन गिल्डों जैसी संकीर्णता कमोबेश इन सभी यूनियनों की अभिलाक्षणिकता थी। एक छोटी-सी अनुदारवादी पार्टी हर क़ीमत पर ट्रेडयूनियनवाद के इस बुनियादी ढाँचे को बरकरार रखना चाहती थी। इण्टरनेशनल की स्थापना के बाद इन अभिप्रेत बन्धनों को छिन्न-भिन्न कर डालने तथा यूनियनों को सर्वहारा क्रान्ति के संगठित केन्द्रों में बदल डालने के काम को शा ने अपने जीवन का लक्ष्य बना लिया। सफलता ने हमेशा ही उनके प्रयत्नों को विजय-मुकुट से विभूषित किया लेकिन उसी समय से उनका जीवन एक भयंकर संघर्ष बन गया जिसमें उनकी कमज़ोर सेहत ने उनका साथ छोड़ दिया। ब्रुसेल्स कांग्रेस (सितम्बर, 1868) के लिए रवाना होते समय ही, वे मौत की दहलीज़ पर खड़े थे। लौटने के बाद, उनके भले बुर्जुआ मालिकों ने उन्हें काम से हटा दिया। वे पत्नी और बेटी को ग़रीबी की हालत में अपने पीछे छोड़ गये हैं, लेकिन अंग्रेज मज़दूर उन्हें कत्तई अकेला, बेसहारा नहीं छोड़ेंगे।

(4 जनवरी 1870 को लिखित, 'ल इण्टरनेशनाल' के 16 जनवरी 1870 (अंक–53) में प्रकाशित, मार्क्स-एंगेल्स : कलेक्टेड वर्क्स, खण्ड–21, पृ. 92)

बोल्शेविक मज़दूर संगठनकर्ता इवान वसील्येविच बाबुश्किन

रूस में जिन थोड़े से उन्नत चेतना वाले मज़दूरों ने कम्युनिज़्म के विचारों को सबसे पहले स्वीकार किया और फिर आगे बढ़कर पेशेवर क्रान्तिकारी संगठनकर्ता की भूमिका अपनायी तथा पूरा जीवन पार्टी खड़ी करने और क्रान्ति को आगे बढ़ाने के काम में लगाया उनमें पहला नाम **इवान वसील्येविच बाबुश्किन** (1873-1906) का आता है। 1894 में बाबुश्किन जब कम्युनिस्ट बना तो उसकी उम्र महज़ 21 वर्ष थी।

लेनिन 1893 में पीटर्सबर्ग आये। इसके पूर्व 1887 में कज़ान विश्वविद्यालय में पढ़ते समय लेनिन ने क्रान्तिकारी छात्र आन्दोलनों में हिस्सा लेते हुए 17 वर्ष की आयु में **फेदोसेयेव** नामक व्यक्ति द्वारा चलाये जाने वाले मार्क्सवादी मण्डल में हिस्सा लेना शुरू किया। क्रान्तिकारी छात्र आदोलन में भाग लेने के कारण गिरफ़्तारी और निष्कासन के बाद लेनिन ने अद्‌भुत गति और एकाग्रता से मार्क्सवाद का गहन अध्ययन किया। कज़ान से समारा पहुँचने के बाद लेनिन ने उस शहर में पहला मार्क्सवादी मण्डल क़ायम किया। 1893 के अन्त में वे पीटर्सबर्ग पहुँचे। वहाँ के मार्क्सवादी मण्डलों के सदस्य उनके सैद्धान्तिक-व्यावहारिक ज्ञान और सांगठनिक क्षमता से बहुत प्रभावित हुए और लेनिन उनके नेता बन गये। यहीं 1894 में उनकी मुलाक़ात क्रान्तिकारी **क्रूप्स्काया** से हुई जो बाद में उनकी जीवन-संगिनी भी बनीं।

इवान बाबुश्किन पीटर्सबर्ग के सेम्यान्निकोव कारख़ाने में काम करने वाला युवा मज़दूर था, जो आम मज़दूरों से अलग, अपनी ज़िन्दगी के हालात और पूँजीपतियों के शोषण-उत्पीड़न के बारे में हमेशा सोचता

रहता था। उसे मुक्ति के रास्ते की बेचैनी से तलाश थी। उन दिनों मज़दूरों और छात्रों में ज़ारशाही विरोधी जो नयी सरगर्मियाँ थीं, उनका उत्सुकतापूर्वक अध्ययन करते हुए वह मार्क्सवादियों के सम्पर्क में आया। बाबुश्किन का लेनिन से सम्पर्क हुआ और उनसे मार्क्सवाद की शिक्षा लेते हुए वह उन्हें बेहद प्यार करने लगा। लेनिन ने एक योग्य संगठनकर्ता के रूप में बाबुश्किन की सम्भावनाओं को पहचाना और उन्हें विकसित किया।

बाबुश्किन की धीरज भरी, अनथक कोशिशों से ही सेम्यान्निकोव कारख़ाने में मज़दूरों का मार्क्सवादी मण्डल संगठित हुआ।

मण्डल के अध्ययन चक्रों में मार्क्सवाद पर लेनिन के व्याख्यानों और मज़दूरों से उनके सवाल-जवाबों को याद करते हुए बाबुश्किन ने लिखा है : "व्याख्याता बिना कोई पुस्तक या नोट्स सामने रखे, हम लोगों के सामने इस (मार्क्सवादी) विज्ञान की व्याख्या करता था और अक्सर हमें वह अपने कहे पर आपत्तियाँ उठाने के लिए, या फिर बहस शुरू करने के लिए उकसाता था। फिर वह बहस करने वालों को आपस में वाद-विवाद करने देता था। इससे पढ़ाई जीवन्त और दिलचस्प हो जाती थी... हम सभी इससे बहुत खुश होते थे और अपने शिक्षक की क्षमता की तारीफ़ करते थे।"

पीटर्सबर्ग के सभी उन्नत चेतना वाले मज़दूर लेनिन को प्यार करने लगे और उन्हें अपना नेता मानने लगे। बाबुश्किन के तेज़ी से हो रहे विकास और सांगठनिक-राजनीतिक नेतृत्वकारी गुणों से लेनिन बहुत प्रभावित हुए।

1894 के अन्त में बाबुश्किन के ही सहयोग से लेनिन ने पहला आन्दोलनकारी परचा लिखा और सेम्यान्निकोव कारख़ाने के हड़ताली मज़दूरों के नाम एक अपील निकाली।

1895 में लेनिन ने पीटर्सबर्ग के सभी मार्क्सवादी मज़दूर मण्डलों को (जिनकी संख्या उस समय 20 के आसपास थी) जोड़कर **मज़दूर मुक्ति संघर्ष** की पीटर्सबर्ग लीग नामक संगठन बनाया, जो तत्कालीन मज़दूर आन्दोलन के साथ समाजवाद की विचारधारा और राजनीति को

जोड़ने वाला पहला संगठन था। मुक्ति संघर्ष लीग (संक्षिप्त नाम) के गठन में भी बाबुश्किन की प्रमुख सहयोगी भूमिका थी। 1895-96 में पीटर्सबर्ग मज़दूर हड़तालों का केन्द्र बन गया था। इन हड़तालों के समर्थन में मुक्ति संघर्ष लीग परचे निकालकर मज़दूरों को संघर्ष का रास्ता बताता था, उन्हें अपनी माँगें पेश करने और लड़ने का तरीक़ा बताता था, कारख़ाना-मालिकों की लूट और अमानवीय उत्पीड़न का तथा उनकी पीठ पर खड़ी ज़ारशाही का भण्डाफोड़ करता था। इन सभी परचों की तैयारी में बाबुश्किन लेनिन का अनन्य सहयोगी था। इन्हें मज़दूरों तक पहुँचाने और आन्दोलनों में भागीदारी में भी उसकी भूमिका अग्रणी थी। 1895 के शरद में लेनिन ने थार्नटन मिल के स्त्री-पुरुष हड़ताली मज़दूरों के लिए जो परचा लिखा, वह उनके संघर्ष को आगे बढ़ाने में विशेष मददगार सिद्ध हुआ। मज़दूर अपनी लड़ाई जीत गये। इसके बाद थोड़े से समय में ही मुक्ति संघर्ष लीग ने विभिन्न कारख़ानों के मज़दूरों के लिए दर्ज़नों परचे और अपीलें निकालीं। मज़दूरों में संगठन का व्यापक आधार तैयार हुआ। बड़े पैमाने पर मज़दूर मार्क्सवाद को स्वीकार कर पार्टी में भरती होने लगे।

दिसम्बर, 1895 में ज़ारशाही ने लेनिन को गिरफ़्तार कर लिया, पर जेल से वे गुप्त सम्पर्क बनाकर मुक्ति संघर्ष लीग की मदद करते रहे तथा लगातार पुस्तिकाएँ और परचे लिखते रहे। उधर बाहर बाबुश्किन के साथ अब मजदूर संगठनकर्ताओं की एक पूरी टीम खड़ी हो गयी थी जो खुली और गुप्त कार्यवाहियों में दिन-रात लगी हुई थी। ऐसा ही एक मज़दूर संगठनकर्ता **वासिली आन्द्रियेविच शेल्गुनोव** भी था, जो बाद में अन्धा हो गया था।

1896 की गर्मी में मुक्ति संघर्ष लीग के नेतृत्व में पीटर्सबर्ग के तीस हज़ार सूती मज़दूरों की हड़ताल काम के घण्टों को कम करने के प्रश्न पर हुई। इसी हड़ताल के दबाव में ज़ारशाही को जून, 1897 में क़ानून बनाकर काम के घण्टों पर साढ़े ग्यारह घण्टे की सीमा लगानी पड़ी।

पीटर्सबर्ग की मुक्ति-संघर्ष लीग की स्थापना से 1898 में रूसी सोशल-डेमोक्रेटिक लेबर पार्टी की स्थापना तक की यात्रा में सबसे

अधिक योगदान करने वालों में बाबुश्किन एक था।

1900 में पहले अखिल रूसी ग़ैरकानूनी अख़बार 'ईस्क्रा' का प्रकाशन शुरू हुआ। इसके पीछे लेनिन की एक ऐसे अख़बार की सोच काम कर रही थी जो मज़दूर वर्ग के शिक्षक, प्रचारक, आन्दोलनकर्ता और संगठनकर्ता की भूमिका निभाते हुए पार्टी-निर्माण और पार्टी-गठन के काम में कुंजीभूत भूमिका निभाये।

म्यूनिख़, लन्दन और जेनेवा से प्रकाशित होकर 'ईस्क्रा' गुप्त रूप से रूस पहुँचता रहा। पीटर्सबर्ग, मास्को आदि शहरों में मज़दूरों तक अख़बार पहुँचाने और पार्टी की लेनिनवादी 'ईस्क्रा' नीति का समर्थन करने वाली कमेटियों-ग्रुपों का जाल बिछा देने में **बाबुश्किन, गुसेव, कालीनिन, बौमान** आदि पेशेवर क्रान्तिकारियों की अग्रणी भूमिका थी।

लेनिन के शब्दों में बाबुश्किन "ईस्क्रा के सबसे कर्मठ संवाददाता और जोशीले समर्थक थे।" विशाल रूस के विभिन्न शहरों से रिपोर्ट इकट्ठा करके सम्पादकों को भिजवाना, अख़बार का वितरण सुनिश्चित करना और इसके वितरकों-एजेण्टों के तन्त्र के ज़रिये पार्टी का ताना-बाना खड़ा करना – इन सभी कामों में बाबुश्किन की अग्रणी भूमिका थी। एक बार दक्षिणी रूस के येकातेरीनोस्लाव शहर में इन्हीं कामों के दौरान उसे गिरफ़्तार भी कर लिया गया, पर खिड़की की छड़ें काटकर वह जेल से भाग निकला और कोई भी विदेशी भाषा न जानने के बावजूद सीधे लन्दन, 'ईस्क्रा' के आफिस पहुँच गया।

1903 में पार्टी की दूसरी कांग्रेस के समय बाबुश्किन सुदूर उत्तर में निर्वासित जीवन बिता रहा था। पर इस दौरान भी वह लगातार अध्ययन कर रहा था और अन्य निर्वासित मज़दूरों में बोल्शेविज़्म का प्रचार कर रहा थ्झा।

1905 में आम माफी से निर्वासन-दण्ड की समाप्ति हुई, पर इस समय तक साइबेरिया में भी क्रान्ति की आग फैलने लगी थी। बाबुश्किन पार्टी की इर्कुत्स्क कमेटी के सदस्य के रूप में वहाँ काम करने लगा।

1905-07 की क्रान्ति में उसने जमकर भागीदारी की। चिता नगर के हथियारबन्द विद्रोह का वह भी एक नेता था। उसी दौरान एक रेल डिब्बे

में भरकर पाँच साथियों के साथ चिता से हथियारों की एक बड़ी खेप ले जाते समय ज़ारशाही के ताजीरी दस्ते ने उसे पकड़ लिया और गोली मार दी।

बाबुश्किन का जीवन इस बात का प्रमाण था कि उन्नत चेतना के मज़दूर राजनीति और विचारधारा से लैस होकर नेतृत्वकारी क्षमताओं वाले संगठनकर्ता बन सकते हैं। ऐसे सर्वहारा चरित्र तैयार करके कोई भी पार्टी अपनी सफलता की एक बुनियादी गारण्टी हासिल करती है।

बाबुश्किन का जीवन भारत के क्रान्तिकारी संगठनकर्ताओं और वर्ग-सचेत मज़दूरों के लिए भी अक्षय प्रेरणा का स्रोत है।

बाबुश्किन की मृत्यु की सूचना पार्टी के साथियों को बरसों बाद मिली। यह सूचना मिलने के बाद उनकी स्मृति में पार्टी-पत्र **'राबोचाया गजेता** में लेनिन ने जो प्रसिद्ध लेख (निधन सूचना) लिखा था, उसे हम यहाँ अलग से प्रकाशित कर रहे हैं।

– आलोक रंजन

(निधन सूचना)
लेनिन

हम अभिशप्त काल में रह रहे हैं, जब ऐसी बातें सम्भव हैं : पार्टी का विलक्षण कार्यकर्ता, जिस पर सारी पार्टी को गर्व है, वह साथी, जिसने अपना सारा जीवन मज़दूरों के ध्येय को अर्पित किया, लापता हो जाता है। और उसके निकटतम सम्बन्धी, जैसे कि पत्नी और माँ, घनिष्ठतम साथी बरसों तक यह नहीं जानते कि उसका क्या हुआ : कहीं कठोर श्रम-कारावास में वह हड्डियाँ गला रहा है या किसी जेल में उसने दम तोड़ दिया है या शत्रु के साथ टक्कर में वीरगति को प्राप्त हुआ है। यही इवान वसील्येविच बाबुश्किन के साथ हुआ, जिन्हें रेन्नेनकाम्प्फ ने गोली मार डाली। अभी हाल ही में हमें उनकी मृत्यु का पता चला है।

इवान बाबुश्किन का नाम हमारे मन के निकट है, हमारे मन को प्रिय है, केवल हम सामाजिक-जनवादियों के मन को ही नहीं। जितने भी लोगों ने उन्हें जाना, सभी के मन में उनका तेज, उनकी गहन और प्रबल क्रान्तिकारी भावना, अपने ध्येय में उनकी निष्ठा और शब्दाडम्बर से दूरी देखकर उनके प्रति प्रेम और आदर जागा। पीटर्सबर्ग के इस मज़दूर ने 1895 में दूसरे वर्ग-चेतन साथियों के साथ मिलकर नेवस्कया जस्तावा के इलाके में सेम्यान्निकोव और अलेक्सान्द्रोव कारखानों के व काँच फैक्टरी के मज़दूरों के बीच जोरदार काम किया, मण्डल गठित किये, पुस्तकालय खोले और सारा समय स्वयं भी पूरी लगन से शिक्षा पाता रहा।

उनके सारे विचार एक ही बात पर केन्द्रित थे कि काम कैसे अधिक फैलाया जाये। 1894 के पतझड़ में सेंट पीटर्सबर्ग में निकाले गये **पहले प्रचार परचे** को, जो सेम्यान्निकोव कारखाने के मज़दूरों को सम्बोधित था, तैयार करने में इवान वसील्येविच ने सक्रिय भाग लिया और ख़ुद अपने हाथों से उसे बाँटने का काम किया। जब सेंट-पीटर्सबर्ग में 'मज़दूर वर्ग की मुक्ति के लिए संघर्ष करने वाली लीग' गठित हुई, तो इवान वसील्येविच उसके एक सबसे सक्रिय सदस्य बने और अपनी गिरफ्तारी तक उसमें काम करते रहे। पीटर्सबर्ग में उनके साथ करते रहे पुरालने साथियों – 'इस्क्रा' के संस्थापकों – ने उनके साथ इस विचार पर सलाह-मशविरा किया था कि विदेश में ऐसा राजनीतिक समाचारपत्र स्थापित किया जाये, जो सामाजिक-जनवादी पार्टी की एकता और सुदृढ़ता बढ़ाने में सहायक हो, और इस विचार पर उनका ज़ोरदार समर्थन पाया था। जब तक इवान वसील्येविच आज़ाद रहे, 'ईस्क्रा' के पहले बीस अंक देखिये, शूया, इवानोवो-वोज्जेसेन्स्क, ओरेखोवो-जूयेवो तथा केन्द्रीय रूस के दूसरे स्थानों से ये सारी रिपोर्टें – इनमें प्रायः सभी इवान वसील्येविच के हाथों से गुजरीं। 'ईस्क्रा' और मज़दूरों के बीच घनिष्ठतम सम्बन्ध बनाने के लिए वे प्रयत्नशील रहे। वे 'ईस्क्रा' के सबसे कर्मठ संवाददाता और जोशीले समर्थक थे। केन्द्रीय रूस से बाबुश्किन दक्षिण में, येकातेरीनोस्लाव नगर को चले गये (वहाँ उन्हें

गिरफ्तार करके अलेक्सान्द्रोव्स्क जेल में रखा गया। वहाँ से अपने एक साथी के साथ खिड़की के सींखचे काटकर वे भाग निकले। एक भी विदेशी भाषा उन्हें नहीं आती थीं, तो भी लन्दन पहुँच गये, जहाँ तब 'ईस्क्रा' के सम्पादकीय कार्यालय था। बहुत सी बातें हुई थीं तब, बहुत से सवालों पर मिलकर सोच-विचार किया था। लेकिन इवान वसील्येविच पार्टी की दूसरी कांग्रेस में भाग नहीं ले पाये... जेलों और निर्वासन ने उन्हें देर तक कुछ करने योग्य न छोड़ा। क्रान्ति की उठती लहर नये कार्यकर्ताओं को, पार्टी के नये नेताओं को सामने ला रही थी, और बाबुश्किन इस बीच पार्टी के जीवन से कटे सुदूर उत्तर में, वेर्खोयांस्क में, रह रहे थे। पर उन्होंने समय व्यर्थ नहीं गँवाया, अध्ययन करते रहे, संघर्ष के लिए, अपने को तैयार करते रहे, निर्वासन में अपने साथ मज़दूरों के बीच सक्रिय रहे, उन्हें सचेतन सामाजिक-जनवादी और बोल्शेविक बनाने के प्रयासों में जुटे रहे। 1905 में राज-क्षमा का आदेश आया और बाबुश्किन रूस को लौट चले। लेकिन उन दिनों साइबेरिया में भी ज़ोरों से संघर्ष चल रहा था और वहाँ भी बाबुश्किन जैसे लोगों की ज़रूरत थी। वे इर्कुत्स्क समिति के सदस्य बन गये और तन-मन से काम में जुट गये। उन्हें सभाओं में भाषण देने पड़ते थे, सामाजिक-जनवादी आन्दोलन चलाना और विद्रोह का संगठन करना पड़ता था। जब बाबुश्किन अपने पाँच अन्य साथियों के साथ – खेदवशश हम उनके नाम नहीं जानते – एक अलग रेल डिब्बे में हथियारों की बड़ी खेप चिता* नगर को ले जा रहे थे, तो साइबेरिया में विद्रोह को कुचलने के लिए भेजे गये रेन्नेनकाम्प्फ** के अभियान दल ने रेलगाड़ी रोक ली और छहों के छहों को बिना किसी सुनवाई के वहीं पर जल्दबाजी में खोदी गयी एक साझी कब्र के किनारे खड़ा करके गोलियों से मार डाला। वे वीरों की मौत मरे। प्रत्यक्षदर्शी सैनिकों ने और इस रेलगाड़ी पर जो रेल कर्मचारी थे, उन्होंने उनकी मृत्यु के बारे में

---

* बाद में पता चला कि वे हथियार चिता नगर से ले जा रहे थे। - सं.

** बाद में पता चला कि विद्रोह को कुचलने के लिए भेजा गया दल अ. न. मेल्लेर-जाकोमेल्स्की का था। - स.

बताया। बाबुश्किन जारशाही के लठैत की पाशविक बर्बरता के शिकार हुए। लेकिन मरते समय वह यह जानते थे कि जिस ध्येय को उन्होंने अपना जीवन अर्पित किया है, वह नहीं मरेगा, कि लाखों-करोड़ों लोग यह कार्य करेंगे, कि इस ध्येय के लिए दूसरे साथी मज़दूर प्राण देंगे, कि वे तब तक लड़ते रहेंगे, जब तक कि विजय नहीं पा लेते।...

***

कुछ लोग ये किस्से गढ़ और फैला रहे हैं कि रूसी सामाजिक-जनवादी मज़दूर पार्टी "बुद्धिजीवियों की" पार्टी है, कि मज़दूर उससे कटे हुए हैं, कि रूस में मज़दूर सामाजिक-जनवादी हैं, कि ऐसा खास तौर पर क्रान्ति से पहले और बहुत हद तक क्रान्ति के दौरान था। उदारतावादी उस क्रान्तिकारी जन संघर्ष से, जिसका नेतृत्व 1905 में रूसी सामाजिक-जनवादी मज़दूर पार्टी ने किया, अपनी घृणा के कारण यह झूठ फैला रहे हैं और समाजवादियों में से कुछ अपनी नासमझी या लापरवाही के कारण इसे दोहरा रहे हैं। इवान वसील्येविच बाबुश्किन का जीवन, इस **ईस्क्रा-समर्थक मज़दूर** का दस वर्ष का सामाजिक-जनवादी कार्य उदारपंथियों के इस झूठ का साफ खण्डन करता है। बाबुश्किन उन अग्रणी मज़दूरों में से एक थे, जिन्होंने क्रान्ति से **दस साल पहले मज़दूरों** की सामाजिक-जनवादी पार्टी बनानी शुरू की थी। सर्वहारा-समूहों में ऐसे अग्रणी लोगों के अथक, वीरतापूर्ण और सतत कार्य के बिना रूसी सामाजिक-जनवादी मज़दूर पार्टी दस साल तो क्या, दस महीनों तक भी न बनी रह पाती। ऐसे अग्रणी लोगों की गतिविधियों की बदौलत ही, उनके समर्थन की बदौलत ही 1905 तक सी सामाजिक-जनवादी मज़दूर पार्टी ऐसी पार्टी बन गयी थी जो अक्टूबर और दिसम्बर के महान दिनों में सर्वहारा के साथ **अभिन्न रूप से एकाकार हो गयी,** जिसने न केवल दूसरी दूमा में, बल्कि तीसरी यमदूत सभाई दूमा में भी अपने **मजदूर प्रतिनिधियों** के रूप में यह सम्बन्ध बनाये रखा।

उदारतावादी (कैडेट) पहली दूमा के अध्यक्ष स.अ. मूरोम्त्सेव को, जिनका अभी कुछ समय पहले निधन हुआ है, जन-नायक बनाना चाहते

हैं। हमें, सामाजिक-जनवादियों को, जारशाह सरकार के प्रति अपनी घृणा प्रकट करने का मौका नहीं चूकना चाहिए, उस सरकार के प्रति, जो मूरोम्त्सेव जैसे नरमपंथी और नपुंसक अधिकारियों पर भी अत्याचार करती थी। मूरोम्त्सेव सिर्फ़ नरमपंथी अधिकारी थे। जनवादी तो उन्हें किसी भी तरह से नहीं कहा जा सकता। वह जन साधारण के क्रान्तिकारी संघर्ष से डरते थें वह ऐसे संघर्ष से रूस के लिए मुक्ति पाने की आशा नहीं करते थे, बल्कि स्वेच्छाचारी जारशाही की सद्भावना से, रूसी जनता के इस निकटतम और निर्मम शत्रु के साथ **समझौते** से। ऐसे लोगों को रूसी क्रान्ति का जन-नायक कहना हास्यास्पद ही है।

लेकिन ऐसे जन-नायक हैं। ये बाबुश्किन जैसे लोग हैं। वे लोग, जिन्होंने क्रान्ति से पहले साल-दो साल नहीं, बल्कि पूरे दस साल मज़दूर वर्ग की मुक्ति के लिए संघर्ष को अर्पित किये। ये वे लोग हैं, जिन्होंने इक्के-दुक्कों की आतंकवादी कार्रवाइयों में अपनी शक्ति व्यर्थ नहीं गँवायी, बल्कि दृढ़तापूर्वक, अडिगता से सर्वहारा जन-समूहों में काम करते रहे, **उनकी** क्रान्तिकारी गतिविधियाँ विकसित करने में मदद करते रहे। ये वह लोग हैं, जिन्होंने संकट की घड़ी आने पर, क्रान्ति के शुरू होने पर, कोटि-कोटि लोगों के गतिशील होने पर स्वेच्छाचारी जारशाही के विरुद्ध सशस्त्र जन-संघर्ष की अगुवाई की। स्वेच्छाचारी जारशाही से जो कुछ जीता गया वह **केवल** जनसमूहों के संघर्ष से ही जीता गया, उस संघर्ष से, जिसका नेतृत्व बाबुश्किन जैसे लोगों ने किया।

ऐसे लोगों के बिना रूसी जनता सदा दासों और तलवा चाटने वालों की जनता रहती। ऐसे लोगों के साथ रूसी जनता हर तरह के शोषण से पूर्ण मुक्ति पा लेगी।

1905 के दिसम्बर विद्रोह के पाँच वर्ष पूरे हो गये हैं। आइये, हम शत्रु के साथ संघर्ष में वीरगति को प्राप्त हुए अग्रणी मज़दूरों की स्मृति में शीश नवाकर यह वर्षगाँठ मनायें। मज़दूर साथियों से हमारा अनुरोध है कि वे उन दिनों के संघर्ष के बारे में संस्मरण जमा करके हमें भेजें, बाबुश्किन के बारे में अतिरिक्त जानकारी भी भेजें और 1905 के विद्रोह में शहीद हुए दूसरे सामाजिक-जनवादी मज़दूरों के बारे में भी। हम ऐसे

मज़दूरों की जीवनियों की पुस्तिका छापने का इरादा रखते हैं। ऐसी पुस्तिका उन सब लोगों को करारा जवाब होगी, जो रूसी सामाजिक-जनवादी मज़दूर पार्टी में पूरा विश्वास नहीं रखते और जो उसकी भूमिका को घटाकर दिखाना चाहते हैं। ऐसी पुस्तिका युवा मज़दूरों के लिए श्रेष्ठ पठन-सामग्री होगी। वे इससे यह सीखेंगे कि हर वर्ग-चेतन मज़दूर को कैसे जीना और काम करना चाहिए।

(राबोचाया गजेता अंक, 18, (31) दिसम्बर 1910 खण्ड 20, पृ. 79-83)

मदर जोंस : मज़दूरों की बूढ़ी अम्मा और पूँजीपतियों के लिए "अमेरिका की सबसे खतरनाक औरत"

आज़ादी और बराबरी के लिए मज़दूरों की लम्बी लड़ाई ने सैकड़ों ऐसी महिलाओं को जन्म दिया है जिन्होंने न केवल मुनाफाखोर लुटेरों के दिलों में दहशत पैदा कर दी बल्कि दुनियाभर में नये समाज के लिए लड़ने वालों के लिए एक मिसाल बन गई। इन्हीं में से एक थीं अमेरिका की मैरी जोंस जिन्हें मज़दूर प्यार और आदर से मदर जोंस कहकर पुकारते थे और पूँजीपतियों के अखबार ''अमेरिका की सबसे खतरनाक औरत'' कहते थे।

पहली मई, 1880 को आयरलैण्ड में जन्मी मैरी हैरिस 1838 में अपने परिवार के साथ अमेरिका चली आयी थी। स्कूली पढ़ाई पूरी करने के बाद वह पहले दर्ज़िन का और फिर स्कूल टीचर का काम करने लगी। 1861 में उसने लोहा ढलाई मज़दूर और यूनियन कार्यकर्ता जार्ज जोंस से शादी कर ली। लेकिन छह साल बाद ही पीले बुखार की महामारी में उसके पति और चार बच्चों की मौत हो गयी।

मैरी जोंस शिकागो चली आयी और कपड़े सिलने का काम करने लगी, लेकिन कुछ ही समय बाद 1871 में शिकागो में लगी भीषण आग में उसका घर जलकर राख हो गया। उसने एक चर्च के तलघर में शरण ली और सड़कों पर भटकते हुए वह मज़दूर संगठन 'नाइट्स ऑफ लेबर' की बैठकों में जाने लगी। जल्दी ही वह जी-जान से मज़दूर आन्दोलन में लग गयी और ताउम्र इसे आगे बढ़ाने में जुटी रही। मज़दूरों को

संगठित करने के प्रयासों में मदद करने के लिए वह देश भर में घूम-घूमकर अपने जोशीले भाषणों से उनमें उत्साह भरने लगी। यूनियन संगठनकर्ता के रूप में अपने कई दशक लम्बे जीवन के दौरान मैरी हैसि जोंस ने कोयला खनिकों, सूत मिलों के बाल मज़दूों, रेल के डिब्बे बनाने वालों और धातु खदानों के मज़दूरों को संगठित किया।

मदर जोंस ने अपनी ज़िन्दगी का बड़ा हिस्सा खदान मज़दूरों की संगठनकर्ता के रूप में बिताया। वेस्ट वर्जीनिया और पेनसिल्वेनिया प्रांतों के कोयला मज़दूरों की यूनियन बनाने का हक दिलाने की लड़ाई में उन्होंने अपने 40 वर्ष खपा दिये। एक इतिहासकार के शब्दों में, ''खनिकों के संघर्षों में वह खाइयों और नाले पार करके पर्चे बाँटने जातीं, बेधड़क मशीनगनों के सामने खड़ी हो जातीं और अक्सर सिपाहियों को ताना मारती थीं कि उनमें हिम्मत हो तो एक बुढ़िया को गोली मारकर दिखायें।''

मदर जोंस ने मज़दूर बस्तियों की औरतों को संगठित कर मज़दूर हितों की लड़ाई का एक सक्रिय और अहम हिस्सा बना दिया। उनका एक सबसे असरदार हथियार था **''बरतन-भाँडा ब्रिगेड''** सन् 1900 में पेनसिल्वेनिया के कोयला मज़दूर जब हड़ताल पर थे तो मदर जोंस ने औरतों को संगठित करके हड़तालतोड़कों को हड़ताली मज़दूों की जगह काम पर जाने से रोक दिया। औरतें खदानों के गेट पर इकट्ठा हो गईं और अपने बरतन पीटते और झाड़ू लहराते हुए गद्दार मज़दूरों पर इतने जोर से चीखी-चिल्लायीं कि वे भाग खड़े हुए। मदर जोंस ने एक पत्र में लिखा है, ''उस दिन से औरतें दिनो-रात खदानों पर चौकसी रखने लगीं, ताकि कम्पनी हड़ताल तोड़ने के लिए बाहरी मज़दूरों को न ला सके। हर रोज औरतें एक हाथ में झाड़ू और पतीले लिए हुए और दूसरे हाथ में शाल में लिपटे नन्हें बच्चों को सँभाले हुए खदानों पर जाने लगीं। उन्होंने किसी को भीतर नहीं जाने दिया।''

सूत मिलों और कोयला खदानों में बच्चों से जिन हालात में काम लिया जाता था, उसे देखकर मदर जोंस गुस्से से बिफर उठती थीं। बाल मज़दूरों की हालत के बारे में खुद जानकारी लेने के लिए उन्होंने दक्षिण

की कपड़ा मिलों में काम भी किया। केनसिंगठन में 1903 में कपडत्र मिल मज़दूरों की हड़ताल के लिए समर्थन जुटाने वहाँ गईं मदर जोंस ने उस समय के अनुभव के बारे में लिखा है, ''हर दिन छोटे-छोटे बच्चे यूनियन के दफ्तर में आते थे। किसी का हाथ कुचल गया था, किसी का अँगूठा गायब था, किसी की उँगलियाँ कटी हुई थीं। वे अपनी उम्र से भी छोटे दिखते थे, दुबले-पतले और सिकुड़े हुए-से। उनमें से बहुतों की उम्र दस साल भी नहीं थी, हालाँकि प्रान्तीय क़ानून में बारह साल से कम के बच्चों से काम लेने की मनाही थी।'' वह बच्चों का शोषण रोकने के लिए क़ानून बनाने की माँग लेकर फिलाडेल्फिया के बच्चों के एक बड़े जुलूस के साथ राष्ट्रपति थिओडोर रूजवेल्ट से मिलने भी गयीं जो उस वक्त न्यूयार्क के अपने बंगले में छुट्टियाँ मना रहा था। राष्ट्रपति ने उन लोगों से मिलने से भी मना कर दिया लेकिन जनता के दबाव में पेनसिल्वेनिया की विधानसभा को बाल मज़दूरी क़ानून में सुधार करना पड़ा।

मदर जोंस सौ साल तक ज़िन्दा रहीं और आखिरी साँस तक वह अमेरिका के मज़दूरों की दशा बेहतर बनाने के संघर्ष से किसी न किसी तरह जुड़ी रहीं।

लम्बी लड़ाई के बाद अमेरिका के मज़दूर वर्ग ने बहुत से अधिकार हासिल किये और नर्क के ग़ुलामों जैसी ज़िन्दगी से मुक्ति पायी। अमेरिकी पूँजीपतियों ने दुनिया भर की मेहनतकश जनता को लूटकर अपने यहाँ मज़दूरों के एक हिस्से को खूब सुविधाएँ भी दीं। इन्हीं सुविधाप्राप्त मज़दूरों के बीच से निकले खाये-पिये अघाये मज़दूर कुलीनों ने अल्बर्ट पार्सन्स और मदर जोंस जैसे हीरों से जगमगाते अमेरिकी मज़दूर आन्दोलन के शानदार इतिहास को कलंकित कर दिया है। लेकिन हिन्दुस्तान सहित तीसरी दुनिया के तमाम देशों में आज भी करोड़ों मज़दूर वैसी ही नारकीय ज़िन्दगी जी रहे हैं जिसके खिलाफ़ सौ साल पहले मदर जोंस लड़ रही थीं। उनके लिए मदर जोंस की ज़िन्दगी प्रेरणा की मिसाल बनी रहेगी। मदर जोंस ने बाल मज़दूरों की स्थिति का जायजा लेने के लिए मिल में मज़दूरी करते हुए जो रिपोर्ट लिखी थी, वह आगे दी जा रही है।

अमेरिका की सूत मिलों में ज़िन्दगी की एक झलक

मदर जोंस

अलाबामा प्रान्त में बर्मिंघम की खदानों में और रेल पटरियों पर काम करने वाले मज़दूरों ने कुछ महीने पहले एक शाम मुझे दक्षिणी अमेरिकी प्रान्तों की सूत मिलों में मज़दूरों की हालत के बारे में विस्तार से बताया। उन्होंने इन मज़दूरों की ग़ुलामों जैसी ज़िन्दगी की एकदम जीती-जागती तस्वीर मेरी आँखों के सामने खड़ी कर दी। उनकी बातें सुनकर मुझे लगा कि वह जगह काला पानी से भी बढ़कर है। लेकिन मैंने सोचा कि ये लड़के बढ़ा-चढ़ाकर बातें कर रहे हैं। मैंने तय कर लिया कि मैं खुद जाकर इन हालात को देखूँगी।

मैंने वहाँ नौकरी ढूँढ़ ली और मिल तथा बस्ती में मज़दूरों के साथ घुल-मिलकर रहने लगी। मैंने देखा कि सुबह साढ़े चार बजे ठेकेदार की सीटी बजते ही छह-सात साल के बच्चों को घसीटकर बिस्तर से उठा दिया जाता था। वे रेड़ी के तेल में भिगोकर मक्के की रोटी का मामूली नाश्ता करते थे और पेट में जलन पैदा करने वाली काली कॉफी का एक-एक प्याला पीकर चल पड़ते थे। बड़े और छोटे ग़ुलामों की पूरी फौज पाँच बजे तक सड़कों पर होती थी। साढ़े पाँच बजे तक वे सब कारखाने की ऊँची दीवारों के पीछे होते थे, जहाँ मशीनों की घरघराहट के बीच रोज चौदह घण्टे तक उनकी कमसिन ज़िन्दगी मुनाफे की चक्की में पिसती रहती थी। इन असहाय इन्सानों के उदास चेहरों को

देखकर लगता था जैसे उनकी आत्मा चीखकर कह रही हो, ''अरे ओ, पूँजीवादी लालच के फौलादी चक्को, जरा देर के लिए थम जाओ! हम एक-दूसरे की आवाज़ें तो सुन सकें, और यह महसूस तो कर सकें कि बस यूँही घिसते जाना ही ज़िन्दगी नहीं है।'' दिन के बारह बजे हम थोड़ा-सा खाना खाने और आधे घण्टे आराम के लिए रुके। 12.30 बजे हम फिर काम में लग गये और बिना रुके सात बजे तक खटते रहे। फिर हम पैर घसीटते हुए घर लौटे जहाँ हमने रूखा-सूखा रात का खाना खाया, कुछ देर तक अपनी दुर्दशा पर बातें कीं और फिर पुआल के बिस्तर पर पड़ रहे – भोर होते ही सीटी की कर्कश आवाज़ ने बच्चों सहित सबको जगाकर फिर से कमरतोड़ काम पर भेज दिया।

मैंने देखा क माँएँ नींद से ढिमलाते अपने नन्हें बच्चों को जगाने के लिए उनके मुँह पर ठण्डा पानी फेंक देती हैं। मैंने उन्हें सारा दिन खतरनाक मशीनों पर काम करते देखा है। मैंने उनके नन्हें अंगों को मशीनों में फँसकर कटते देखा है, और जब वे अपाहिज होकर अपने मालिक के किसी काम के नहीं रह जाते, तो उन्हें मरने के लिए कारखाने से धकियाकर बाहर किये जाते भी देखा है। हाँ, मगर कम्पनी को इस बात का श्रेय मुझे देना ही चाहिए कि वह हर इतवार को प्रवचन देने के लिए एक पादरी को पैसे देकर बुलाती है। उपदेशक महोदय मज़दूरों को समझाते हैं कि ''ईसा मसीह की प्रेरणा से श्रीमान फलाँ ने फैक्टरी बनाई ताकि आप लोग कुछ पैसे कमा सकें और पुण्य कमाने के लिए कुछ दान-दक्षिणा दे सकें।''

मैं अलाबामा के टुस्कालूसा में स्थित फैक्टरी में रात दस बजे पहुँची। सुपरिटेण्डेण्ट को मेरे मक़सद के बारे में कुछ पता नहीं था इसलिए उसने मुझे भीतर घूमने दिया। एक मशीन, जिसमें 155 तकलियाँ थीं, के पास दो नन्हीं लड़कियाँ खड़ी थीं। मैंने पास खड़े एक आदमी से पूछा कि क्या ये उसकी बच्चियाँ हैं। उसने हाँ में जवाब दिया।

''कितनी उम्र हैं इनकी?'' मैंने पूछा।

''ये 9 की है, वह 10 की,'' उसने जवाब दिया।

''रोज कितने घण्टे काम करती हैं?''

जवाब था, ''बारह।''

''एक रात के काम का इन्हें कितना मिलता है?''

''हम तीनों को मिलाकर 60 सेंट* मिलते हैं। उन्हें 10-10 सेंट मिलते हैं और मुझे 40 सेंट।'' (*100 सेंट का एक डालर होता है। उस समय का एक सेंट आज के क़रीब एक रुपये के बराबर होगा। – सं.)

सुबह गुलामों के उस बाड़े से बाहर जाते हुए मैंने उन्हें देखा। जाड़े की बर्फीली हवा से बचने के लिए अपने दुबले-पतले नन्हें शरीर पर चिथड़े लपेटकर वे दुबकती हुई चली जा रही हैं। आधा पेट खाकर, अधनंगे रहकर और टूटे-फूटे घरों में जाकर ये खटते रहते हैं जबकि उनके मालिकान के झबरीले कुत्ते दूध और गोश्त खाते हैं और पंखों वाले नर्म बिस्तर पर सोते हैं – और पूँजीवादी जज उन आन्दोलनकारियों को जेल भेज देते हैं जो इन बदहाल मज़दूरों की हालत सुधारने में उनकी मदद करने की गुस्ताखी करते हैं। दक्षिण में फैले नरक का एक हिस्सा गिब्सन कस्बा भी है। यहाँ मुख्य पेशा जिंघम (मोटा रंगीन सूती कपड़ा) की बुनाई है। यह कस्बा एक बैंकर की सम्पत्ति है जो यहाँ की मिलों और लोगों, दोनों का मालिक है। उसकी एक गुलाम ने मुझे बताया कि उसे अपनी मेहनत के लिए पूरे एक साल तक हर हफ्ते एक डालर मिलता था। हर हफ्ते मज़दूरी वाले दिन उसका ठेकेदार उसे एक डालर देता था। सोमवार को वह अपना एक डालर पड़ोस की एक दुकान में जमा कर देती थी जहाँ उसे एक हफ्ते तक घटिया खाना मिलता रहता था। बस ऐसे ही हफ्ते-दर-हफ्ते उसकी ज़िन्दगी चलती रहती थी।

एक समय अलाबामा के क़ानून में बारह साल तक के बच्चों से रोजाना 8 घण्टे से ज्यादा काम लेने पर रोक थी। गैडस्न कम्पनी अड़ गयी कि जब तक यह क़ानून वापस नहीं लिया जायेगा तब तक वह यहाँ नई मिल नहीं लगायेगी। असेम्बली के क़ाग़जात पढ़ने से मुझे पता चला कि जब इस क़ानून को खत्म करने के सवाल पर बहस हुई तो सदन में साठ सदस्य मौजूद थे। इनमें से सत्तावन ने क़ानून खत्म करने के पक्ष में वोट दिया और सिर्फ तीन उसके खिलाफ थे।

मैंने असेम्बली के एक सदस्य से पूछा कि उसने बच्चों की हत्या करने के लिए वोट क्यों दिया। उसने जवाब दिया कि उसका ख्याल था कि सिर्फ़ आठ घण्टे काम करने से बच्चे अपने गुजारे लायक पैसे नहीं कमा पायेंगे। ऐसे हैं वे घाघ जिन्हें ''सोच-समझकर'' वोट डालने वाले मज़दूर चुनकर भेजते हैं। जार्जिया की फीनिक्स मिलकर मिल के मालिक क़रीब एक साल पहले मज़दूरी में कटौती की सोच रहे थे। लेकिन एक कोशिश करने के बाद वे पीछे हट गये और इसके बजाय एक बचत बैंक शुरू कर दिया। छह महीने बाद बोर्ड ऑफ डायरेक्टर्स ने पाया कि उनके लिए दौलत पैदा करने वाले मज़दूर अपनी मज़दूरी का 10 प्रतिशत बचत करते हैं। उन्होंने फौरन मज़दूरी में 10 प्रतिशत कटौती कर दी जिसका नतीजा हुआ 1896 की बड़ी हड़ताल। मैं सोचकर हैरान रह जाती हूँ कि अमेरिकी जनता ऐसी स्थितियों में आखिर कब तक चुप रहेगी।

इन सूत मिलों में मेरे साथ काम करने वाला हर इनसान किसी न किसी बीमारी का शिकार था। हर किसी से उसकी ताक़त की आखिरी बूँद तक निचोड़ ली जाती थी। बुनकरों से अपेक्षा की जाती है कि वे हर रोज दरज़नों गज़ कपड़ा तैयार करें। फैक्टरी में मशीन पर काम करने वाला अपने शरीर और दिमाग़ की सारी ताक़त खो देता है। दिमाग़ इस तरह कुचल जाता है कि कुछ भी सोचना मुश्किल होता है। इन लोगों के साथ घुलने-मिलने वाला कोई भी व्यक्ति जान जायेगा कि इनके शरीर की तरह इनके मन भी टूट चुके हैं। नींद और आराम की कमी से भूख मर जाती है, अपच रहता है, शरीर सिकुड़ जाता है, कमर झुक जाती है और सीने में हर वक़्त जलन रहती है।

ऐसा फैक्टरी सिस्टम लोगों को तड़पा-तड़पाकर मारने का इंतजाम है। यह लम्बे समय तक धीरे-धीरे चलने वाले क़त्लेआम की तरह भयानक है और किसी भी कौम या किसी भी युग के ऊपर एक कलंक है। इस तस्वीर को आँखों के सामने उभरता देखती हूँ तो मैं उस राष्ट्र के भविष्य के बारे में सोच कर काँप उठती हूँ जो सर्वहारा वर्ग के बच्चों के खून से धनिकों और कुलीनों का तंत्र खड़ा कर रहा है। ऐसा लगता

है कि जैसे हमारा राष्ट्रीय झण्डा खून के धब्बों से भरा कोई कफन हो। पूरी तस्वीर भयानक और घिनौने लालच, स्वार्थ और क्रूरता से भरी है। आज यह घृणा पैदा करती है और कल यह पतन का कारण बनेगी। आधा पेट खाकर ताक़त से दूना काम करने वाली माँएँ थके और जर्जर शरीर वाले नये इनसानों को जन्म देती हैं।

पूँजीवादी व्यवस्था को सिरे से उखाड़कर फेंक दिया जाये, इसके सिवा और कोई रास्ता मुझे दिखायी नहीं देता। जो बाप इस व्यवस्था को बनाये रखने के लिए वोट देता है, वह मेरी नजर में वैसा ही हत्यारा है मानो उसने पिस्तौल लेकर अपने बच्चों को गोली मार दी हो। लेकिन मुझे अपने चारों ओर समाजवाद की नई सुबह फूटने की निशानियाँ दिखायी दे रही हैं, और हर जगह अपने भरोसेमन्द साथियों के साथ मैं उस बेहतर दिन को लाने के लिए काम करूँगी और कामना करूँगी कि वह जल्दी आये। ●